वेदों में आयुर्वेद

गोपीनाथ पारीक गोपेश
अध्यक्ष
राजस्थान आयुर्वेद विज्ञान परिषद्

विद्या दो प्रकार की है- परा तथा अपरा।

परमात्मा सम्बन्धी विद्या परा है और लौकिक तथा पारलौकिक भोगों की प्राप्ति, रचना आदि विषयों की जानकारी कराने वाली विद्या 'अपरा' के नाम से जानी जाती है। इस अपरा विद्या के अठारह भेद है-

अंगानि वेदाश्चत्वार: मीमांसा न्यायविस्तर:।
पुराणं धर्मशास्त्रं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश॥
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गंधर्वश्चेत्यनुक्रमात्।
अर्थशास्त्रं परं तस्माद् विद्याष्टादश स्मृता:॥

ज्योतिष को वेदांग कहा गया है, वेद चार हैं ही। वेद भारतीय ही नहीं, मानवीय सभ्यता के आदि ग्रंथ हैं। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ये चार वेद है। धनुर्वेद को ऋग्वेद का, आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपवेद माना गया है। कुछ विद्वान ऋग्वेद का उपवेद अर्थवेद, यजुर्वेद का उपवेद धनुर्वेद और सामवेद का उपवेद गंधर्ववेद को मानते हैं। 'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' इस परिभाषा से वस्तु का तात्त्विक वकक स्वरूप जाना जाने के कारण इन वेद-उपवेद को वैदिक दर्शन भी कहते हैं। आध्यात्मिक विषयों के प्रसिद्ध विचारक श्री वासुदेव शरण अग्रवाल अपने वैदिक दर्शन नामक आलेख में लिखते है कि- 'अन्य दर्शन बुद्धि के लिये और वैदिक दर्शन हृदय के लिये हैं। बुद्धि बिना जल के भीतर बैठे प्रवाह की मीमांसा कर सकती है, मधु का स्वाद चखे बिना वह मधु की ऊहापोह करने की अभ्यस्त है, परंतु हृदय तरंगित जल में तैरना और मधु का स्वाद चखना चाहता है। अन्य दर्शनों की पद्धति मनुष्य के एक चैतन्य के एक अंश का स्पर्श करती है, वैदिक दर्शन उसके समग्र रूप के साथ तन्मय होने का निमंत्रण देता है। भविष्य निश्चय रूप से वैदिक दर्शन के हाथ है, क्योंकि उसका संदेश कविता के द्वारा कहा गया है। बुद्धि से थके हुये मानव की भावी भाषा कविता ही होगी। वेद से भारतीय दर्शन तथा संस्कृति के सर्व प्राचीन स्त्रोत और विश्वास के पवित्र ग्रंथ हैं। वेद शब्द विद् धातु से बना है जो सत्ता, विचारण, ज्ञान और

लाभ चार अर्थों को व्यक्त करता है अर्थात जिसकी सदैव सत्ता हो, जो ऐहिकामुष्मिक विचारों का कोश हो, जो अपूर्व ज्ञानप्रद हो और जो लौकिक लोकोत्तर लाभ प्रदान करता हो। सत्ता, गुण, विचार और लाभ ये चारों गुण आयुर्वेद में भी विद्यमान होने से आचार्यों ने इसे भी वेद कहा है- 'तस्यायुष: पुण्यतमो वेद:' (सुश्रुत)।

जब मनु महाराज 'वेदो अखिलो धर्ममूलम्;' कहते हैं तो आवश्यक हो जाता है कि यह धर्म क्या है ? धर्म की विविध शास्त्रों में विविध परिभाषायें दी है किंतु यदि संक्षेप में धर्म को जानना चाहें तो-

य एव श्रेयस्कर: स धर्मशब्देनोच्यते।

अर्थात् जो कुछ श्रेयस्कर (मंगलकारक) है, उसका नाम धर्म है। सभी प्रकार से श्रेयस्कर होने से आयुर्वेद भी एक धर्मप्राण जीवन विज्ञान सिद्ध होता है। धर्मपरायण ऋषियों ने धार्मिक भावना से प्रेरित होकर ही आयुर्वेद का प्रवर्तन संवर्धन किया-

धर्मार्थ चार्थकामार्थं आयुर्वेदो महर्षिभि:।
प्रकाशितो धर्मपरै: इच्छद्भि: स्थानमक्षरम्॥ - चरक०चि० १-४-५७

वैद्य के लिये धार्मिक होना उतना ही आवश्यक है, जितना आयुर्वेद का विज्ञाता होना-

आयुर्वेदस्य विज्ञाता चिकित्सासु यथार्थवित्।
धार्मिकश्च दयालुश्च तेन वैद्य: प्रकीर्तित:॥ - ब्रह्मवैवर्त पुराण 16-26

भट्टार हरिश्चंद्र ने असात्मेंद्रियार्थ संयोग-प्रज्ञापराध-परिणाम इन व्याधि हेतु त्रय में परिणाम के अंतर्गत अधर्म को भी रोगों का प्रमुख कारण स्वीकार किया है। चक्रपाणिदत्त ने अधर्म को प्रज्ञापराध के अंतर्गत माना है।

'धर्मेण हन्यते व्याधि:' को ध्यान में रखते हुये आचार्य वाग्भट्ट लिखते हैं-

सुखार्थी: सर्वभूतानां मता: सर्वा: प्रवृत्तय:।
सुखं च न विना धर्मात् तस्माद् धर्मपरो भवेत्॥ - अ०हृ० सू०२-२४

आयुर्वेद का धर्म के साथ घनिष्ठ सम्बंध को विश्लेषित करते हुये धर्म धुरन्धर विद्वान् व्याख्याकार हेमाद्रि इस श्लोक की व्याख्या इस प्रकार करते हैं-

यद्यपि षोडशात्मकाच्चिकित्सानादारोग्यं तथापि धर्मसहकृता देवेति धर्मस्यायुर्वेदाङ्गत्वम्। - हेमाद्रि

'धर्मात् सिध्यति सर्वम्' (चक्रपाणि) को हृदयंगम करते हुये धर्मपरायण आयुर्वेद में निष्णात एक धार्मिक आयुर्वेद चिकित्सक अपने भगवान से यही प्रार्थना करता है-

भगवान मेरा जीवन सद्धर्म के लिए हो।
हो जिंदगी तो लेकिन उपकार के लिये हो॥

वेदों से ही सारी धर्मव्यवस्थायें हैं। मंत्र और ब्राह्मण भेद से इन वेदों के दो प्रकार हैं। इनका जो मंत्र समुदाय है, वह संहिता के नाम से भी जाना जाता है। ब्राह्मण भाग इस संहिता भाग की व्याख्या करता है। यह ब्राह्मण भाग भी तीन भागों में विभक्त है- ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद्। यज्ञस्वरूप प्रतिपादक भाग को ब्राह्मण विषयक मोक्षसाधनों की विवेचना प्रस्तुत करने वाले भाग को उपनिषद् नाम से जाना जाता है।

वेद अनादि, नित्य और अपौरुषेय तथा इनकी प्रामाणिकता स्वत: सिद्ध है। जो शास्त्र या व्यक्ति इनको प्रमाण मानता है, वह आस्तिक तथा नहीं मानने वाला नास्तिक कहलाता है। आयुर्वेद भी इन्हें प्रमाण मानने के कारण आस्तिकता से परिपूर्ण है। वेदों के अध्ययन अध्यापन एवं अनुशीलन की भाँति ही इस आयुर्वेद को धारण करने का महर्षि कश्यप परामर्श देते हैं

धारणं ह्यस्य तंत्रस्य वेदानां धारणं यथा।
पुण्यं मंगल्यमायुष्यं दु:स्वप्नकलिनाशनम् ॥
धर्मार्थकाममोक्षाणीं धर्ममायतनं महत् ।
सुखप्रदं नृणां शश्वद्धनमान यशस्करम् ॥ - का०सं० सू० 27

तब ही तो वेदों को नारायण का स्वरूप माना गया और इनमें उपदिष्ट कार्यों को ही धर्म माना गया है-

वेदप्रणिहतो धर्मो धर्मस्तद्विपर्यय: ।
वेदो नारायण: साक्षात् स्वयम्भूरिति शुश्रुम: ॥ - श्रीमद्भागवत 6-1-40

वेदों पर सायणाचार्य ने भाष्य लिखे और भी अनेकानेक मनीषियों ने इन पर विस्तृत विवेचनायें प्रस्तुत कीं, उनका उल्लेख करना सही विषयान्तर होगा, किन्तु आचार्य श्री चतुरसेन का यह कथन लिख देना उपयुक्त होगा जर्मन के

मैक्समूलर ने वैदिक साहित्य पर बहुत परिश्रम किया। वह योरोप भर में वेद का सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता के रूप में प्रसिद्ध हो गया। उसने अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे । स्वामी दयानन्द ने उसके जो वैदिक व्याख्यान थे, उनका कठोरता से खण्डन किया। मैक्समूलर ने ते दों पर परिश्रम तो बहुत किया, परन्तु वेदों के सम्बन्ध में उसकी धारणा बहुत हीन रही । सन् 1866 में उसने अपनी पत्नी को जो पत्र लिखा था, उसमें उसने लिखा था यह वेदों का संस्करण तथा मेरा वेदभाष्य उत्तरकाल में भारत के भाग्य पर भी भारी प्रभाव डालेगा। यह उनके धर्म का मूल ग्रन्थ है और मैं निश्चयपूर्वक यह कह सकता हूँ कि उन्हें उसका दिग्दर्शन कराती मृत तीन हजार वर्षों की दीर्घकालीन आस्तिक भावना को निर्मूल कर देगा' |

यद्यपि वेद के नाम से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्व वेद का शुरु किया जाता है, परन्तु वैदिक साहित्य के अन्तर्गत उपवेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, उपनिषद् तथा छह वेदांग आदि सभी का ग्रहण किया जाता है। अत: आयुर्वेद की भी गणना वैदिक साहित्य के अन्तर्गत ही की जाती है। वैदिक मन्त्रों के दो प्रकार के मुख्य पाठ उपलब्ध होते हैं. संहिता पाठ और पद पाठ । संहिता पाठ को अधिक प्रामाणिक एवं पवित्र समझा जाता है। भारतीय परम्पराओं के अनुसार ऋषियों को वेदों का ज्ञान संहिता के रूप में हुआ था। वेदों का अध्ययन अध्यापन भी संहिताओं के रूप में किया जाता है। आयुर्वेद के चरक संहिता, सुश्रुत संहिता एवं काश्यप संहिता आदि संहिता ग्रन्थ प्रसिद्ध है। कविराज रत्नाकर शास्त्री ने स्पष्ट किया है, कि प्राचीन काल में मौलिक ग्रन्थ को तन्त्र या अन्य स्वतन्त्र नाम देकर प्रसिद्ध किया जाता था । परन्तु जो ग्रन्थ सर्वथा मौलिक न होकर अन्यों के लेख अथवा विचारोंसे संकलित होते थे वे 'संहिता' कहे जाते थे । वेदों की संहिताओं से लेकर उसके उपरान्त के भी संग्रह ग्रन्थ संहिता के नाम से प्रसिद्ध हुये । संहिता शब्द का अर्थ ही बिखरी हुई सामग्री को संग्रहित करना है' (भारत के प्राणाचार्य)" ।

ऋग्वेद- ऋग्वेद विश्व के प्राचीनतम साहित्य में सर्वाधिक प्राचीन महान और सर्वमान्य ग्रन्थ है। भारतीय सभ्यता और संस्कृति का सम्पूर्ण ज्ञान इसमें निहित है। इसमें कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड एवं उपासना काण्ड के साथ अनेक ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं चिकित्सा सम्बन्धी विषयों का निर्देश है। चिकित्सा से सम्बन्धित अनेक मन्त्र ऋग्वेद में हैं। ओषधियों, मन्त्रों द्वारा चिकित्सा की जाती थी। आयुर्वेद के अनुसार ओषधियों से चिकित्सा करना युक्तिव्यपाश्रय है तो मन्त्रों द्वारा चिकित्सा करना देवव्यपाश्रय है। योग्य वैद्य चिकित्सा करने हेतु अनेक ओषधियों का संग्रह करते थे। एक मंत्र (१-२४-९) में प्रार्थना की गई है कि 'हे राजन् तुम्हारे पास सैंकड़ों वैद्य हो'।

ऋग्वेद में शल्य विज्ञान के विकास के भी संकेत मिलते हैं। अश्विनी कुमार मुख्य शल्य चिकित्सक थे, जिन्होंने विश्पला की टूटी जांघ को जोड दिया था, ऋजाश्व की आंखें बनाई थी और श्रोण के घुटने ठीक किये थे। इन्होंने प्रजापति से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर इंद्र को दिया था। उसी ज्ञान को इंद्र से भारद्वाज ने ग्रहण किया था, जिसका उल्लेख चरक के

सूर्यस्थान के प्रथम अध्याय में मिलता है। इन्होंने च्यवन ऋषि को वह अवलेह सेवन करा कर पुनर्योवन प्रदान किया था, जो आज च्यवनप्राश के नाम से विश्वविख्यात है। इसके अतिरिक्त बहुत से योग हैं, जिन्हें प्रयोग में लाकर वैद्य रुग्णजनता को लाभान्वित करते हैं। राजयक्ष्मा में प्रयुक्त बृहद्वासावलेह, यकृत्प्लीहा रोगों में प्रयुक्त गुडपिप्पली, वातरक्त में प्रयुक्त अमृता घृत तथा श्री गोपाल तैल, गुड कूष्माण्ड, बृहदश्वगंधा कृत आदि तथा श्री गोपाल तैल, गुड इन्हीं अश्विनी देवताओं की ही देन है।

ऋग्वेद में आयुर्वेदीय चिकित्सा के मूल आधार वात, पित्त, कफ (त्रिदोष) का स्पष्टतया वर्णन मिलता है-

ओ३म् त्रिर्नो आश्विना दिव्यानि भेषजाभि: पार्थिवानि त्रिभिर्दत्तमरुद्भ्य: ओमानं शं योर्ममकाय सूनवे त्रिधातु शर्मवद्वतं शुभस्यती।– ऋग्वेद१-३४-६

ओउम् या व: कार्मशमनाय सन्ति त्रिधातूनि दाशुभेयकक्षमाथि। अस्मभ्यं तानि मरुतो कियन्तोपिं नो धत्त वृषण: सुवीर्यम्॥ - ऋग्वेद १-८५-१२

त्रिधातूनि त्रयो वात पित्तकफा: येषु शरीरेषु तानि शरीराणि। -दयानंद सरस्वती

त्रिदोष के इस प्रसंग में यह लिख देना उपयुक्त समझता हूँ जो आचार्य श्री प्रियव्रत शर्मा ने 'त्रिदोष की प्रधानता' (सचित्र आयुर्वेद दिस. १९९६) नामक लेख में व्यक्त किया है। आप लिखते हैं कि- 'त्रिदोष स्थूल शरीर के घटक न होकर लिंग शरीर के अंग हैं, जो सूक्ष्म रूप से जीवात्मा के साथ साथ और मृत्यु के समय निकल जाते हैं। इस बीच के काय, जिसे 'आयु' कहते हैं, में ये जीवन की क्रियाओं का संचालन करते हैं। विसर्ग, आदान और विक्षेप कफ, पित्त, और वात के प्रमुख कर्म हैं।

त्रिदोष में भी वायु की प्रधानता है। यह वायु ही पित्त और कफ को गति प्रदान करता है, जिससे ये कार्यक्षम होते हैं.। वेद में कहा गया है कि प्राणव्यापार वायु से होता है। प्राण को समस्त प्राणियों के अन्दर जीवनी शक्ति के रूप में व्यक्त किया है।

ऋग्वेद के ऐतरेय और कौषातकी ये दो आरण्यक हैं। ऐतरेयारण्यक (२-३-३) में कहा गया है, कि यह वायु पाँच प्रकार का है जिनके नाम प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान है। श्वासनि: श्वास की प्रक्रिया का वर्णन बड़े ही सुन्दर रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिसमें वायु से प्रार्थना की गई है कि हे वायु, तू रक्त में जो मल है उसे बाहर निकाल क्योंकि तू सब रोगों का भेषज है, तू देवों का दूत होकर विचरता है -

द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः ।
दक्षं ते अन्य आ वातु पगन्ते वातु यद् रपः ॥
आ वात वाहि भेषजं निवात नहि यद् रपः ।
त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे ॥ - ऋग्वेद 10-136-2

दीर्घजीवन के लिये अमृतमय औषध भण्डार से अंश प्राप्ति की प्रार्थना वायु से की गई है, क्योंकि वायु ही विश्वभेषज या देवदूत के नामों से जाना गया है। ऋतु संधियों में व्यापक रूप से फैलने वाली महामारियों को रोकने के "भैषज्य यज्ञ" किये जाते थे जिससे वातावरण सुरभिमय रोग दूर होते थे। आचार्य चरक इसी ओर इंगित करते हुये कहते हैं-

यथा प्रयुक्तया चेष्ट्या राजयक्ष्मा पुरा जितः ।
तां वेदविहितामिष्टिम् आरोग्यार्थी प्रयोजयेत् ॥ - चरक - 1२२

सृष्टि क्रम में सूर्य की उत्पत्ति में कई मन्त्र हैं। जैसे 'सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयत् (ऋ०१०-१९०-३) और शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु (ऋ०७-३५-८)। इस सूर्य की धूप के सेवन से कई रोग दूर होते हैं। प्रातः काल की सूर्यरश्मियों के प्रभाव से पीलिया रोग मिटता है (१-५-११)। जल से भी रोगनिवृत्ति का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है-

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामभूत प्रशस्तये । - ऋग्वेद-१-२३-१९

अर्थात् हे विद्वानों! तुम अपनी उत्तमता के लिये जल में जो रोगों के निवारण करने वाला अमृतरूप रस तथा औषध है, उसको जानो।

यह बड़े सौभाग्य की बात है कि - यूनेस्को ने ऋग्वेद की पाण्डुलिपियों को विश्व धरोहरों की श्रेणी में डाल भारतीय वैदिक साहित्य की प्राचीनता तथा उपयोगिता को स्वीकारा है।

यजुर्वेद

यजुर्वेद में यज्ञानुष्ठान सम्बन्धी उपयोगी मन्त्रों का संकलन है। प्रसिद्ध गायत्री मन्त्र इसी वेद का है। इसमें गद्यात्मक मन्त्र की अधिकता है। वैसे सभी वेदों में यज्ञों की महिमा गायी गई है। ऋग्वेद के मन्त्र यज्ञ में काम आते हैं, यज्ञ में साम वेदों का गान होता है, और अथर्व वेद विहित प्रयोग यज्ञ में सम्पन्न होते हैं। यजुर्वेद तो है ही यज्ञ करने का वेद। मत्स्य पुराण के अनुसार यजुर्वेद के अधिक प्रचार-प्रसार के कारण त्रेतायुग में यज्ञकर्म की प्रधानता थी। भगवान् श्रीकृष्ण प्रमाणित करते हैं कि यज्ञ, दान और तप ये तीन मनीषियों के पावन कर्म हैं -

यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम्॥ - गीता -18-5

अग्नि को देवताओं का मुख कहा गया है 'अग्निर्हि देवतानां मुखम् (शतपथ ब्राह्मण ३-७-२-६)। जिस देवता के निमित्त यज्ञ किया जाता है, उस देवता का उस समय ध्यान करने से यज्ञ की वह हवि उस देवता तक पहुँचती है. और यज्ञकर्त्ता भी अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। देवताओं ने भी अपनी सर्वविध सिद्धि इस यज्ञ से ही प्राप्त की है-

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्। - यजुर्वेद 31-16

चरकसंहिता के विमानस्थान अध्याय आठ में शिष्यों के उपनयन महोत्सव का विस्तार से वर्णन किया है। इसमें समस्त यज्ञविधि का वर्णन करते हुये आचार्य यज्ञ करते है और शिष्य भी गुरुजन का अनुसरण करते हैं। इनमें पलाश (ढाक), इंगुदी (हिंगोट), उदुम्बर (गूलर) आदि समिधाओं को उपयोग में लाने का निर्देश है, जो पर्यावरण को विशुद्ध करने में बड़ी भूमिका निभाती है। इसी प्रकार सुश्रुत संहिता (सूं-२) में तथा काश्यपसंहिता में भी यज्ञ विधान का वर्णन मिलता है। रोगों की मुक्ति हेतु वेदों का श्रवण-मनन तथा जप- होम की उपादेयता प्रदर्शित करते हुये आचार्य चरक कहते हैं-

जपहोमप्रदानेन वेदानां श्रवणेन च।
ज्वराद् विमुच्यते शीघ्रं साधूनां दर्शनेन च॥ - चरक चि०३-३१५

निरुक्तकार यास्क यजु: शब्द यज धातु से निष्पन्न मानते हैं जिससे यजुर्वेद का अर्थ ही यज्ञस्वरूप वेद होता है। इसमें रुद्र (शिव) का विशेष स्तवन किया गया है। इस वेद में भी कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड एवं उपासना काण्ड का वर्णन मिलता है।

सम्प्रदाय के आधार पर यह वेद दो भागों में विभक्त है- आदित्यपरम्परा से प्राप्त को शुक्ल यजुर्वेद तथा ब्रह्मपरम्परा से प्राप्त करने को कृष्ण यजुर्वेद कहा जाता है।

"सर्वमन्यत् परित्यज्य शरीरमनुपालयेत्' इस आयुर्वेदोक्त सीख को यजुर्वेद इस प्रकार व्यक्त करता है कि- मनुष्यों को चाहिये कि सबसे पहले शरीर को स्वस्थ बनाये रखने हेतु पथ्य का पालन करें, उपयुक्त ओषधियों का सेवन करें तथा स्वास्थ्य के नियमों का पालन करें क्योंकि आरोग्य के बिना धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का अनुष्ठान नहीं हो सकता-

शतं वो अम्ब धामानि सहस्रमुत वो रुहः।
अधा शतक्रत्वो यूयमिमं मे अगदं कृत:॥ -यजु-12-76

एक प्राणाचार्य को सदा यह यजुर्वेदोक्त प्रार्थना करनी चाहिये -

तेजोऽसि तेजो मयि धेहि वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
बलमसि बलं मयि धेहि ओजोऽस्योजो मयि धेहि ।
मन्युरसि मन्यं मयि धेहि सहोऽसि सहो मयि धेहि।। - यजु०१९-९

हे प्रभो ! आप तेजस्वरूप हैं मुझे भी तेजस्वी बना। तेरे तेज से तेजस्वी होकर मैं निस्तेजों में तेज का संचार कर दूँ। आप पराक्रमशील है मुझ में भी स्थिर पराक्रम फूंक दें। तेरे पराक्रम से पराक्रमी से होकर मैं आरोग्यप्रद शिक्षाओं को चारों ओर फैला सकूं। आप बलस्वरूप है। मुझ में भी बल का आधान कर दो। तेरे बस से बलशाली हो कर में संसार से अज्ञान, अन्याय और अभाव को दूर कर दूँ। तू ओजस्वी है मुझे भी ओज प्रदान कर, जिससे मैं पापियों को, रोग राक्षसों को परास्त कर सकूं। आप दुष्टों पर क्रोधधारी है मुझे भी वह क्रोध प्रदान कर जिससे वे भयभीत होकर अपनी दुष्टता का परित्याग कर दें। इसके साथ ही मुझे भी आपकी तरह सहन- शील बना दे। वयं राष्ट्र जागृयाम पुरोहिता:' (यजु. 9-२३)|

सामवेद -

इसमें गायन पद्धति के निश्चित मन्त्र है, जो भारतीय संगीत का परिचय देते हैं। इसके गायन की शिक्षा देने वाली तीन, शाखायें हैं - नारदीय शिक्षा, गौतम शिक्षा और लोमश शिक्षा। ये सभी - ऋषि- महर्षि चरकोक्त संगोष्ठी (चरक सू० अ० एक) में उपस्थित हुये थे। संगीत शास्त्र की उत्पत्ति इसी वेद से हुई है। भरत मुनि ने भी सामभ्यो गीतमेव च' कह कर सामवेद से ही गीत की उत्पत्ति मानी है। - वेणुवादनप्रवीण लोकरक्षक भगवान् श्रीकृष्ण अपनी विभूति सामवेद को मानते हैं- "वेदानां सामवेदोऽस्मि (ग्रीम १०-२२)।

अशान्ति, अनिद्रा, स्नायुओं की दुर्बलता और मानसिक व्यग्रता में संगीत से अच्छा लाभ मिलता है। इससे रोगों के नाश में भी सहायता मिलती है। कहा गया है-

व्याधिनाशे शत्रुनाशे भयशोक विनाशने ।
पंचस्वरा: प्रगातव्या: ग्रह शान्त्यर्थकर्मणि ॥

खमास, भीम पलाशी आदि रागनियों के गाने से वात का, मेघ मल्हार, गौड मल्हार आदि रागनियों से पित्त का तथा भैरवी, आसावरी आदि रागनियों से कफ का शमन होता है।

अथर्ववेद-

अथर्व का अर्थ है - कमियों को हटाकर ठीक करना। अतः इसमें यज्ञसम्बन्धी तथा व्यक्तिसम्बन्धी सुधार करने

वाले अधिक मन्त्र हैं। इस वेद का नामकरण अन्य वेदों की भाँति शब्द- शैली पर नहीं है, अपितु इसके प्रतिपाद्य विषय के अनुसार हैं। इस वैदिक शब्द राशि का प्रचार एवं प्रयोग मुख्यतया अथर्व नामक महर्षि द्वारा किया गया। इसलिये भी इस वेद का नाम अथर्ववेद है। इसे ब्रह्मवेद एवं भिषग्वेद भी कहा जाता है। आयुर्वेद इसी अथर्ववेद का उपवेद है। सुश्रुत संहिता में कहा गया है - इह खल्वायुर्वेदोऽष्टाङ्ग उपाङ्गमथर्ववेदस्य- (सु०सू० 1-5)।

अथर्ववेद का कथन है कि 'मधुमती वाचमुदेयम्' (अथर्व० १६-2-2) अर्थात् हम अति प्रिय और मीठी वाणी बोलें। कवि कृपाराम कहते हैं - 'कहे कृपाराम सब सीखिबो निकाम, एक बोलिबो न सीख्यो सब सीख्यो गयो धूल में'। वैसे तो यह सीख सभी जनों के लिये है किन्तु एक चिकित्सक के लिये यह बहुत अनिवार्य है क्योंकि चिकित्सक को शास्त्र का ज्ञाता होने के साथ मधुरभाषी भी होना चाहिये। चिकित्सक की मीठी वाणी एक रोगी के लिये सौ ओषधियों से बढ़कर है। तभी तो सि.भे. मणिमाला में कहा गया है कि वैद्य आयुर्वेद पूर्ण ज्ञान रखने वाला हो, विविध प्रयोगों को तैयार करने वाला हो तथा मधुरभाषी हो - अधीतायुर्वेदो विविधरसकर्त्ता मधुरगी:।

सुश्रुतसंहिता के सू० अ० सप्तम में वर्णित है - यन्त्रशतमेकोत्तरम्। अत्र हस्तमेव प्रधानतमम्....। अर्थात् शल्यशास्त्रोपयोगी यन्त्र यद्यपि एक सौ एक हैं परन्तु इनमें हाथ ही प्रधान यन्त्र है। यहाँ हाथ की उपयोगिता हाथ में विविध यन्त्रों को ग्रहण करने तथा चिकित्सा में हस्त कौशल के होने में है। चिकित्सक इन हाथों से ही रोग का निदान करता है, तथा रोगों का उपचार करता है। चिकित्सक का जितहस्त 'पीयूषपाणि' होना उसके सुयश को प्रकट करता है- 'सुधाहस्तो वैद्यो नरवर चिकित्सास्वधिकृतः।

चिकित्सक के इस हस्त कौशल एवं सुधाहस्त को ध्वनित करने वाले कई मन्त्र अथर्ववेद में मिलते हैं -

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः। - अथर्व० 4-13-6

मेरा यह हाथ ऐश्वर्ययुक्त है और यह दूसरा हाथ उससे भी अधिक शक्तिशाली और चमत्कारपूर्ण है।

कृतं मे दक्षिणं हस्ते जयो मे सत्य आहितः। - अथर्व० ७-५०-८

मेरे दायें हाथ में कर्म है, पुरुषार्थ है और बायें हाथ में विजय रखी है।

शतहस्तं समाहर सहस्रहस्तं संकिर। - अथर्व ३- २४-५

हे मानव तू सैकड़ों हाथों की शक्तियों वाला होकर ग्रहण कर और सहस्रो हाथों की शक्तियों वाला हो कर वितरण भी कर।

हमारे जीवन में ब्रह्मबल (शास्त्रज्ञान) और क्षात्रबल (शस्त्रावचारण) मे दोनों ही होने चाहिये। आचार्य द्रोण ने द्रुपद को सम्बोधित करते हुये स्वयं के लिये यही तो कहा था-

अग्रतश्चतुरो वेदा: पृष्ठत: सशरं धनु।
इदं ब्राह्ममिदं क्षात्रं शास्त्रादपि शरादपि ।।

अर्थात् हे द्रुपद ! मेरे आगे चारों वेद हैं और पीछे धनुष तथा बाण है। शास्त्र और शस्त्र दोनों ही प्रकार से मैं तुम्हारा मान-मर्दन करने को तैयार हूँ। इसी प्रकार अष्टांग आयुर्वेद के विज्ञाता को उपयुक्त शास्त्रानुसार उपयुक्त औषध प्रदान करने वाला होने के साथ ही आवश्यकता पड़ने पर शस्त्रावचारण में निपुण एक शल्य कोविद भी होना चाहिये। इस सम्पूर्ण ज्ञान के जिये चरक-सुश्रुत दोनों संहिताओं पर पूर्ण अधिकार होना चाहिये।

वेदमर्मज्ञ स्व. पं० श्री मोतीलाल शास्त्री के कथनानुसार - अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद, आदित्य से सामवेद तथा सोम से अथर्ववेद उत्पन्न होता है। वैदिक साहित्य में सोम के अनेक अर्थ है। अनेक मन्त्रों में यह परमात्मा का वाचक है किन्तु मुख्य रूप से सोम से चन्द्रमा अर्थ ही ग्रहण किया जाता है और यह ओषधिनाथ कहा गया है। भगवान कृष्ण भी गीता (१५-१३) में कहते हैं - पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मक: (मैं ही अमृतमय चन्द्रमा हो कर सब ओषधियों को पुष्ट करता हूँ) । चन्द्रमा में दो शक्तियाँ है - प्रकाशिका एवं पोषणिका । इन दोनों शक्तियो से यह विश्व का उपकार करता है। रघुवंश (२-७३) में भी इसे औषधिनाथ कहा है। अथर्ववेद में ईश्वर, जीव और प्रकृति आदि के वर्णन के साथ ही शरीर रचना, रोग विज्ञान एवं औषधविज्ञान पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। ऋग्वेद में जिन आयुर्वेदीय विषयों का संक्षिप्त वर्णन मिलता है, अथर्ववेद में उनका विशद वर्णन मिलता है।

अथर्ववेद की कुल नौ शाखायें हैं जिनमें वर्तमान में केवल शौनकीय और पैप्पलाद से दो शाखायें ही मिलती है जिनमें आयुर्वेद सम्बन्धी ज्ञान भरा पड़ा है तब ही तो इसे 'भिषग्वेद' के नाम से जाना जाता है। इसमें लगभग २८८ वनौषधियों का उल्लेख मिलता है, और इन औषधियों सुखप्रद स्वास्थ्यप्रद होने की प्राथनायें की गई हैं-

सर्वा समग्रा ओषधि बोधन्तु वचसो मम ।
यथेमं पारयामसि पुरुषं दुरितादधि ।। - अथर्व० 8-7-19

(ओषधियाँ अनुकूल, मेरे कथन समान हों।
विपदा हरे समूल, स्वास्थ्य संपदा सतत दें ॥)

अथर्ववेद में मुख्यतः चार प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों का वर्णन मिलता है-

1. **आथर्वणी -** इस पद्धति द्वारा जल प्रोक्षण कर चिकित्सा की जाती है। इस संप्रदाय के लोग मणियों के द्वारा भी चिकित्सा करते थे। वे चिकित्सक योगविद्या में भी निपुण थे जो मुख्यतः मानसिक रोगों की चिकित्सा करते थे।

2. **आंगिरसी -** शरीर की विविध ग्रन्थियों से निःसृत रसों का विशेष ज्ञान रखते थे। इस पद्धति में दैवव्यपाश्रय औषध का वर्णन है।

3. **दैवी -** इस चिकित्सा पद्धति में जल, वायु, अग्नि, सूर्य आदि द्वारा की गई चिकित्सा का वर्णन मिलता है। यह पूर्णतया प्राकृतिक चिकित्सा थी।

4. **साधारणी -** यह जन साधारण की सामान्य चिकित्सा थी जो प्राय: वनौषधियों द्वारा की जाती थी।

अथर्ववेद के चतुर्थ काण्ड का तेरहवाँ सूक्त रोगनिवारण-सूक्त है, जिसके ऋषि शंताति तथा देवता चन्द्रमा एवं विश्वेदेवा हैं। इसके माध्यम से ऋषि ने रोगियों की रोगमुक्ति के लिये देवों से प्रार्थना की है। सूक्त का एक छन्द है-

त्रायन्तामिमं देवास्त्रायन्तां मरुतां गणाः ।
त्रायन्ता विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ॥

हे देवो! इस रोगी की रक्षा करो। हे मरुतों के समूहो ! रक्षा करो। सब प्राणी रक्षा करें। जिससे यह रोगी रोगमुक्त हो जाये।

अथर्ववेदीय पैप्पलाद शाखा का एक दीर्घायुष्य सूक्त है, जिसमें ऋषि पिप्पलाद ने देवों, ऋषियों, गन्धर्वों, लोकों, ओषधियों आदि से दीर्घायु की कामना की है-'दीर्घमायुः कृणोतु मे'।

अन्त में 'अथभूदयां प्रति' इस आयुर्वेक्त सूक्ति को हृदयंगम करते हुये वेदों की इन सूक्तियों का भी मनन करते रहें - 'स्वस्ति पन्थामनु चरेम् (ऋग्वेद ५-५१-१५) हे प्रभो ! हम कल्याण मार्ग के पथिक बनें। सुमृडीको भवतु विश्ववेदा (यजुर्वेद 20-51) (सर्वज्ञ प्रभु हमारे लिये सुखकारी हो)। जनाय उर्जं वरिवः कृधि (सामवेद-८४२) (लोगों में श्रेष्ठ बल पैदा करो) शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः (अथर्व० ३-१२-६)। हम स्वभिलाषित पुत्र-पौत्रादिसे परिपूर्ण हो कर सौ वर्षों तक जीवित रहें)। शुभम् भूयात्॥